(२) गोरक्ष-सिद्धान्त

गोरक्षनाथ के नाम पर जितने भी ग्रन्थ पाए जाते हैं वे प्राय: सभी साधन-ग्रंथ हैं। उनमें साधना के लिये उपयोगी व्यावहारिक तथ्यों का ही संकलन है। बहुत कम पुस्तकें ऐसी हैं जिनसे उनके दार्शनिक मत का, और सामाजिक जीवन में इसके उपयोग का प्रतिपादन हो। सरस्वती भवन टेक्स्ट सीरीज में 'गो र क्ष सि द्धा न्त सं ग्र ह' नामकी एक अत्यन्त उपयोगी पुस्तक प्रकाशित हुई है। पुस्तक अधूरी ही छपी है। इसके सम्पादक सुप्रसिद्ध विद्वान् म० म० पं० गोपीनाथ कविराज हैं। पुस्तक की संस्कृत हल्की, और स्थान स्थान पर, अशुद्ध भी है। इसमें भी सन्देह नहीं कि पुस्तक हाल की लिखी है। फिर भी इसका लेखक बहुश्रुत जान पड़ता है। पुस्तक में पुरानी ५८ पोथियों के प्रमाण संग्रह किए गए हैं[१]। उद्धृत पुस्तकों में से अनेक उपलब्ध नहीं हैं।

---

१. निम्नलिखित पुस्तकों के प्रमाण उद्धृत किए गए हैं :—

१.	सिद्ध सिद्धान्त पद्धति	३०.	शाबरतंत्र
२.	अवधूत गीता	३१.	षोडनित्यातंत्र
३.	सूतसंहिता	३२.	षट्शांभव रहस्य
४.	ब्रह्मबिंदु उपनिषत्	३३.	पद्मपुराण
५.	कैवल्योपनिषत्	३४.	महाभारत
६.	तेजोबिंदूपनिषत्	३५.	कवेषय गीता
७.	अमनस्क	३६.	सनत्सुजातीय
८.	विवेकमार्तण्ड	३७.	बहवृचब्राह्मण
९.	ध्यानबिंदूपनिषत्	३८.	शिव उप०
१०.	मुण्डक उ०	३९.	माण्डूक्य उप०
११.	आत्मोपनिषत्	४०.	भागवत
१२.	अमृतबिंदु उप०	४१.	योगबी०
१३.	मनुस्मृति	४२.	कपिलगीता
१४.	उत्तर गीता	४३.	गोरक्षस्तोत्र
१५.	वायुपुराण	४४.	कल्पद्रुमततंत्रका गोरक्षसहस्रनाम
१६.	मार्कण्डेय पुराण	४५.	सारसंग्रह
१७.	गीता	४६.	स्कंदपुराण
१८.	तंत्रमहार्णव	४७.	रुद्रयामल
१९.	क्षुरिका उप०	४८.	तारासूक्ति
२०.	गोरक्ष उप०	४९.	कुलार्णव तंत्र.
२१.	बृहदारण्यक उ०	५०.	वायुपुराण
२२.	छान्दोग्य उ०	५१.	सूत संहिता
२३.	कालाग्निरुद्र उप०	५२.	आदिनाथ संहिता
२४.	ब्रह्मोप०	५३.	ब्रह्मवैवर्त
२५.	सर्वोप०	५४	शिवपुराण
२६.	राजगुह्य	५५.	परमहंस उप०
२७.	शक्ति संगम तंत्र	५६.	योगशास्त्र
२८.	हठप्रदीपिका	५७.	श्रीनाथसूत्र
२९.	सिद्धान्त बिंदु	५८.	प्रलयह सबद

यह तो कहना ही व्यर्थ है कि गोरक्षनाथ के पहले योग की बड़ी जबर्दस्त परंपरा थी, जो ब्राह्मणों और बौद्धों में समान रूप से मान्य थी। इसका एक विशाल साहित्य था। नाना उपनिषदों में नाना भाव से योग की चर्चा हुई है और बौद्ध साधकों के पास तो काया योग का साहित्य अन्यान्य अंगों से कहीं बड़ा था। इन सब से गोरक्षनाथ ने सार संग्रह किया होगा, परन्तु दुर्भाग्यवश उनके पूर्ववर्ती अनेक ग्रंथ लुप्त हो गये हैं और यह जानने का हमारे पास कोई उपाय नहीं रह गया है कि कहाँ से कितना अमृत उन्होंने संग्रह किया था। अब भी योग साधना बताने वाली उपनिषदें कम नहीं हैं[1]। यह कह सकना बड़ा कठिन है कि इनमें कौन-सी गोरक्षनाथ के पहले की लिखी हुई हैं और कौन सी बाद की। डा० डायसन[2] ने कालक्रम से इन उपनिषदों को चार भागों में विभक्त किया है।

१. प्राचीन गद्य उपनिषत्
२. प्राचीन छन्दोबद्ध उपनिषत
३. परवर्ती गद्य उपनिषत्
४. आथर्वण उपनिषत्

ये क्रमशः परवर्ती हैं। आथर्वण उपनिषदों में संन्यास उपनिषद्, योग उपनिषद्, सामान्य वेदान्त, उपनिषद्, वैष्णव उपनिषद् तथा शैव और शाक्तादि उपनिषद् शामिल हैं। पता नहीं किस आधार पर डायसन ने इन सब को आथर्वण उपनिषद् कहा है। उपनिषद्ब्रह्मयोगी ने २० योगोपनिषदों में एक को भी अथर्ववेद से संबद्ध नहीं माना। परन्तु डॉयसन का यह कथन ठीक जान पड़ता है कि योग उपनिषद् परवर्ती

---

१. मद्रास की अड्यार लाइब्रेरी से अ० महादेव शास्त्री ने सन् १९२० में 'योग उपनिषद्' नामक एक योग विषयक उपनिषदों का संग्रह प्रकाशित किया है। ये सभी उपनिषदें अष्टोत्तरशत उपनिषदों में प्रकाशित हो चुकी हैं; परन्तु शास्त्री जी के संस्करण में यह विशेषता है कि उसमें उपनिषद्ब्रह्मयोगी की व्याख्यायें भी हैं। इस संग्रह की उपनिषदों के नाम ये हैं :

१. अद्वयतारकोपनिषत्
२. अमृतनादोपनिषत्
३. अमृतबिन्दूपनिषत्
४. क्षुरिकोपनिषत्
५. तेजोबिन्दूपनिषत्
६. त्रिशिखब्राह्मणोपनिषत्
७. दर्शनोपनिषत्
८. ध्यानबिन्दूपनिषत्
९. नादबिन्दूपनिषत्
१०. पाशुपतब्रह्मोपनिषत्
११. ब्रह्मविद्योपनिषत्
१२. मण्डलब्राह्मणोपनिषत्
१३. महावाक्योपनिषत्
१४. योगकुण्डल्युपनिषत्
१५. योगचूड़ामण्युपनिषत्
१६. योगतत्त्वोपनिषत्
१७. योगशिखोपनिषत्
१८. वराहोपनिषत्
१९. शाण्डिल्योपनिषत्
२०. हंसोपनिषत्

२. फिलासफी आफ़ उपनिषत्स, पृ० २२-२६

हैं। यदि यह मान लिया जाय कि षडङ्ग योग गोरक्षनाथ आदि का प्रवर्तित है, आसनों की संख्या अधिक मानना हठयोगियों का प्रभाव है और नादानुसंधान इन लोगों की ही विशिष्ट साधना है, तो निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि इनमें कई उपनिषद् गोरक्ष परवर्ती हैं। अमृतनाद, क्षुरिका, ध्यानबिंदु और योगचूड़ामणि आदि उपनिषदों में षडंग योग की चर्चा है, दर्शनोपनिषद् में नौ और त्रिशिख ब्राह्मण में अट्ठारह आसन बताए गए हैं। ब्रह्मबिंदु और ब्रह्मविद्या आदि उपनिषदों में नादानुसन्धान का उल्लेख है, योगतत्त्व, योगशिखा और योगराज उपनिषदों में चार प्रकार के योग और प्राणापान समीकरण की विधि है। कई उपनिषदों में जलंधर और उड्डियान बन्धों की चर्चा है। यह जोर देकर नहीं कहा जा सकता कि ये सारी उपनिषदें गोरक्षनाथ के बाद ही लिखी गई हैं—कुछ में प्राचीनता के चिह्न अवश्य हैं—परन्तु इनमें से अधिकांश पर उनका प्रभाव पड़ा है, यह अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

गोरक्षसिद्धान्तसंग्रह में प्रायः सभी मुख्य मुख्य योगोपनिषदों के वाक्य प्रमाण रूप से उद्धृत किए गए हैं। कुछ ऐसी भी हैं जो इस संग्रह में उपलब्ध नहीं हैं। गोरक्ष, सर्व कालाग्नि और शिव उपनिषदें ऐसी ही हैं। अड्यार लाइब्रेरी ने ७१ उपनिषदों का एक और उपनिषत्-संग्रह प्रकाशित किया था। उसमें शिवोपनिषत् है पर और नहीं हैं। इस प्रकार गोरक्षसिद्धान्तसंग्रह के उद्धृत वाक्य महत्त्वपूर्ण जान पड़ते हैं। जो हो, परवर्ती साधना साहित्य के अध्ययन के लिये यह पुस्तक बहुत उपयोगी है। उस पुस्तक के सिद्धान्तों को संक्षेप में यहाँ संग्रह किया जा रहा है।

ग्रंथ के आरंभ में ही गुरु की महिमा बताई गई है। गुरु ही समस्त श्रेयों का मूल है, इस लिये बहुत सोच समझ कर गुरु बनाना चाहिए।[1] एकमात्र अवधूत ही गुरु हो सकता है; अवधूत—जिसके प्रत्येक वाक्य में वेद निवास करते हैं, पद पद में तीर्थ बसते हैं, प्रत्येक दृष्टि में कैवल्य विराजमान है, जिसके एक हाथ में त्याग है और दूसरे में भोग है और फिर भी जो त्याग और भोग दोनों से अलिप्त है। सूतसंहिता में कहा गया है कि वह वर्णाश्रम से परे है, समस्त गुरुओं का साक्षात् गुरु है, न उससे कोई बड़ा है न बराबर। इस प्रकार के पक्षपात-विनिर्मुक्त मुनीश्वर को ही अवधूत कहा जा सकता है, उसे ही 'नाथ पद' प्राप्त हो सकता है। इस अवधूत का परम पुरुषार्थ मुक्ति है जो द्वैत और अद्वैत के द्वंद्व से परे है। अवधूतगीता में कहा गया है कि कुछ लोग अद्वैत को चाहते हैं कुछ द्वैत को पर द्वैताद्वैतविलक्षण समतत्व को कोई नहीं जानता। यदि सर्वगत देव स्थिर, पूर्ण और निरन्तर हैं तो यह द्वैताद्वैत कल्पना क्या मोह नहीं है[2]?

1. तुलनीय—सि० सि० सं०, पंचम उपदेश
2. अद्वैतं केचिदिच्छन्ति द्वैतमिच्छन्ति चापरे।
समतत्त्वं न जानन्ति द्वैताद्वैतविलक्षणम्।
यदि सर्वगतो देवः स्थिरः पूर्णो निरन्तरः।
अहो माया महामोहो द्वैताद्वैत विकल्पना॥ पृ० ११

इसीलिये सिद्ध जालंधर ने नाथ द्वैत और अद्वैत दोनों से परे—द्वैता द्वैतविलक्षण—कह कर स्तुति की है।[1]

यह मत अपने को वेदान्तियों, सांख्यों, मीमांसकों, बौद्धों और जैनों के मत से अपनी विशेषता प्रतिपादित करता है।[2] श्रुति इन लोगों के मत से सम्बन्धित नहीं है।[3] वेद दो प्रकार के माने गए हैं, स्थूल और सूक्ष्म। स्थूल वेद यज्ञयाग का विधान करते हैं योगियों को इससे कोई वास्ता नहीं उनका मनलाव तो केवल ओंकारमात्र से है। यह ओंकार ही सूक्ष्म वेद है।[4] पुस्तकी विद्या का इस में बड़ा मजाक उड़ाया गया है।[5] और अद्वैत मत से नाथमत का उत्कर्ष दिखाया गया है। इस सिलसिले में एक मनोरंजक कहानी दी गई है। शंकराचार्य अपने चार शिष्यों सहित नदी तीर पर बैठे थे। वहीं भैरव उनकी परीक्षा लेने के लिये कापालिक रूप में उपस्थित हुए और बोले कि आप तो अद्वैतवादी हैं, शत्रु और मित्र को समान भाव से देखते हैं, कृपया मुझे आपका सिर काट लेने दीजिए। शंकराचार्य चक्कर में पड़ गए दोनों ओर आफत थी. देते हैं तो पाप आता है, नहीं देते तो अद्वैत मत स्वतः पराभूत हो जाता है। उन्हें निरुपाय देखकर शिष्यों में से एक ने नृसिंह भगवान् को स्मरण किया। वे तुरन्त घटनास्थल पर पहुंच भैरव से भिड़ गये। तब भैरव ने कापालिक वेश परित्याग कर अपना रूप धारण किया और प्रसन्न होकर मेघमद्र स्वर में कहा—अहो, अद्वैतवाद आज पराजित हुआ, मैंने बालाक मल्ल की भाँति अपने शरीर की हानि करके भी प्रतिद्वंदी को परास्त कर दिया। आओ युद्ध करो। शंकराचार्य इस ललकार का मुकाबला नहीं कर सके क्योंकि उनकी अद्वैत-साधना से संचित और क्रियमाण कर्म तो दग्धबीज की भाँति निष्फल हो जाते हैं परन्तु प्रारब्ध कर्म बने ही रहते हैं। एक कापालिकों का योगमार्ग ही ऐसा है जिसमें सभी कर्म भस्म हो जाते हैं। तो प्रारब्ध कर्मों के प्रताप से शंकर जड़ हो गए। तब जाकर उन्होंने समझा कि उत्तम मार्ग क्या है। इसी अवस्था में उन्होंने सिद्धान्त बिन्दु की रचना की जो असल में नाथमत का ग्रंथ है। इसी अवस्था में उन्होंने वज्र सूचिका पनिषद् भी लिखी।

---

१. वन्दे तन्नाथतेजो भुवनतिमिरहं भानुतेजस्करं वा।
सत्कर्तृव्यापकं त्वा पवनगतिकरं व्योमवन्निर्भरं वा।
मुद्रानादविशूलैर्विमलरुचिधरं खर्परं भस्मभिश्रं
द्वैतं वाऽद्वैतरूपं द्वय उतपरं योगिनं शंकरं वा॥

२. देखिए ऊपर पृ० १-२

३. पृ० २२-२८; ७५-७६

४. पृ० २६

५. तुल०—

पढ़ा लिखा सुआ बिलाई खाया पंडित के हाथि रह गई पोथी।

—गोरखबानी, पृ० ४२

मुक्ति क्या है? मुक्ति वस्तुतः नाथस्वरूप में अवस्थान है। इसीलिये गोरक्ष-उपनिषद् में कहा गया है अद्वैत के ऊपर सदानंद देवता है अर्थात् अद्वैतभाव ही परम नहीं है, सदानन्द वाली अवस्था उसके ऊपर है। वह वाह्याचार के पालन से नहीं मिल सकती। इस मत के अनुसार शक्ति सृष्टि करती हैं, शिव पालन करते हैं काल संहार करते हैं और नाथ मुक्ति देते हैं। नाथ ही एकमात्र शुद्ध आत्मा हैं, बाकी सभी बद्ध जीव हैं—शिव भी, विष्णु भी और ब्रह्मा भी (पृ० ७०)। न तो ये लोग द्वैतवादियों के क्रिया ब्रह्म में विश्वास रखते हैं न अद्वैतवादियों के निष्क्रिय ब्रह्म में। द्वैतवादियों के स्थान हैं, कैलास और वैकुंठ आदि, अद्वैतवादियों का माया-शबल ब्रह्मस्थान और योगियों का निर्गुण स्थान है पर बंधमुक्ति रहित परमसिद्धान्तवादी अवधूत लोग निर्गुण और सगुण से परे उभयातीत स्थान को ही मानते हैं क्योंकि नाथ, सगुण और निर्गुण दोनों से अतीत परात्पर हैं। वे ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र, शिव वेद, यज्ञ, सूर्य, चंद्र, निधिनिधेय, जल, स्थल, अग्नि, वायु दिक् और काल—सबसे पर स्वयं ज्योतिःस्वरूप एकमात्र सच्चिदानंद मूर्ति हैं

न ब्रह्मा विष्णुरुद्रौ न सुरपतिसुरा नैव पृथ्वी न चापो
नैवाग्निर्वापिवायुर्न च गगनतलं नो दिशो नैवकालः
नो वेदा नैव यज्ञा न च रविशशिनौ नो विधि नैविकल्पः
स्वज्योतिः सत्यमेकं जयति तव पदं सच्चिदानन्द मूर्ते।

—सिद्धसिद्धान्त पद्धति

———o———